ज्ञानोन्मेष

e-ISSN : XXXX XXXX
Volume-1, Issue-2 : July-September, 2020

बालक का कला के साथ संयोजन

स्वाति त्रिपाठी

Received : 23-07-2020 **Published Online : Sept.-2020** **Accepted : 04-08-2020**

साहित्य, संङगीत, कला विहीनः
साक्षात्पश पुच्छ, विषाण हीनः
- भर्तहरि (नीति-सतकम्, श्लोक सं १२)

अर्थात् साहित्य. संगीत एवं कला से वंचित मनुष्य बिना पूँछ एवं सीगों के साक्षात् पशु के समान है। वहीं मानव बनने की प्रक्रिया में बाल जीवन का महत्व किसी नवीन बीज को अंकुरण प्रदान करने जैसा है । जिसमें भूमि की उर्वरा शक्ति बढाने वाली खाद ''कला'' कही जा सकती है ।

प्रश्न यह उठता है, कि कला की महत्ता बालक को कैसे प्रभावित करती है ? तो उत्तर स्वरुप मान लीजिए जीवन एक नदी है जिसका नाम गंगा है तो बालक का जन्म ''गंगोत्री'' एक छोटा सा उद्गम, वहीं उसके बाद हिमालय पर्वत पर खेलती-कूदती प्रवाहमान धारा बचपन । जिसमें अत्याधिक उत्साह एवं बिना किसी प्रदूषण के जल को देखा जा सकता है । पूर्व की धाराएँ जिस प्रकार नदी को मार्ग प्रदान करती है उसी दिशा में आगामी जल भी बह चलता है ।

अर्थात् अनुकरणात्मक प्रवृत्ति । यह एक सहज प्रवृत्ति है न केवल नदियाँ अपितु मनुष्य, पशु, पक्षी भी ईसका पालन करते हैं । उदाहराणार्थे :- शखावस्था में जो बालक प्रत्येक आवश्यकता के लिए केवल रोना जानता है, वडा होते-होते अब वह हर आवश्यकता के लिए अलग-अलग शब्दों का प्रयोग करता है अर्थात् अपने से बडों का अनुकरण करता है और यही अनुकरण ही कला का मूल बिन्दु है ।

इस अनुकरण की श्रृखंला में पीढियों का योगदान होता है । सम्भवतः हम लाखों वर्ष पुराने मानव (होमोसेपियन्स) जैसा व्यवहार नहीं करते । ये नवीन स्वरुप हमें अपने पूर्वजों से सीखी गयी क्रियाओं के साथ ही अपनी मौलिकता को जोडे - जाने के फलस्वरुप हुआ है । जिसके कारण उन्हें सुखानुभूति (आनन्द प्राप्ति) हुई । अब सोचने वाली बात है, कि जब थामस एलवा एडिसन ने अपने प्रयोग से पूर्व नजाने कितने असफल प्रयोग किए होगें और न जाने कितने वैज्ञानिकों के प्रयोगों को पढ़ कर, उसमें कुछ नवीन जोड़ने की श्रृंखला में अचानक से एक बल्ब जला होगा फलस्वरुप उन्हें अपार सुख की प्राप्ति हुई होगी । और लोग कहते है कि यह विज्ञान है, नहीं भाई यह आधुनिक विज्ञान भी प्राचीन कला ही है । अपरिचित ! प्रत्येक गणना करने वाले ने इसे उसी तरह देखा है जिस प्रकार एक हाथी को भिन्न-भिन्न स्थान पर छू कर प्रत्येक द्रष्टि-हीन व्यक्ति एक ही हाथी को अपने-अपने अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार से व्यारत्याचित करता है ।

e-ISSN : XXXX XXXX
Volume-1, Issue-2 : July-September, 2020

उपरोक्त पक्तियों में हमने देखा की बालक की क्या प्रवृत्ति होती है और दूसरी ओर यह भी जाना की कला क्या है । यदि निष्कर्ष स्वरुप हम यह कहें कि कला को सर्वप्रथम अभिव्यक्ति देने वाला कलाकार बालक ही है तो कोई अतिश्योक्ति न होगी । भले ही उसमें भिन्न-२ आचार्यों द्वारा व्यारव्यायित १६, ६८ , संख्या आदि की श्रेणी प्राप्त कलाओं का स्तर न भी हो, तो भी कला को कला बनने के मार्ग का द्वार संम्भवतः वही खोलता है ।

कला की परिभाषा : भारतीय विद्वानोंने कला को भिन्न भिन्न रुप से परिभाषित किया है । उदाहरणः-

सत्यम् शिवम् सुन्दरम् की अभिकल्पना ही कला है ।

रविन्द्रनाथ टागोर ।

- ईश्वर की कृतित्व शक्ति का मानव द्वारा शारीरिक तथा मानसिक कौशल पूर्ण-निर्माण कला है ।

- जय शंकर प्रसाद ।

अभिव्यक्ति की कुशल शक्ति ही तो कला है ।

- मैथिली शरण गुप्त ।

कला को समझने का एक सहज उदाहरण प्रस्तुत करती हूं कि मानलीजिए किसी व्यक्ति ने खाना बनाया और सहसा ही वह स्वादिष्ट बन गया, तो क्या यह उस व्यक्ति की कला कही जाएगी ? नहीं । यह पाककला तब-तक नहीं कही जा सकती जब तक भोजन बनाने वाले को इतना अभ्यास न हो जाए कि वह सामान्यतः स्वादिष्ट भोजन न बनाने लगे । यह उसके सामान्य व्यवहार का हिस्सा होना चाहिए ।

कला के प्रकार :- कला के प्रकारों को लेकर भारतीय मनीषियों में मत वैभिन्य दृष्टि गोचर होता है । परन्तु ६४ कलाओं के प्रकार को सर्वाधिक ने सम्मति प्रदान की है । जिसमें शुक्राचार्य द्वारा रचित शुक्रनीति सार, केलदि श्रीवसवराजेन्द्र विरचित शिवतत्व रत्नाकार वात्स्यायन प्रणीत काम सूत्र एवं शैव तन्त्रों की गणना की जा सकती है । अन्य प्रकारों में प्रबन्ध कोश में ७२ एवं ललित विस्तर में ६ कलाओं का उल्लेख प्राप्त होता है ।

यजुर्वेद में नामांकित कलाओं को ऋषि वात्स्यायन ने भली प्रकार ग्रहण किया है तथा काम सूत्र के टीकाकार जयमंगल ने इसे विस्तृत व्यारव्या प्रदान की है । जो निम्न प्रकार से है :-

(१) गीतं, (२) वाद्यं, (३) नृत्यं, (४) आलेख्यं, (५) विशेषकच्छेद्यं (६) पुष्पारण (७) तण्डुलकुसुमवालि विकाराः (८) दशनवसनागराजः (९) मणि भूमिकाकर्म (१०) रायनरचनं (११)उदकवाद्यं (१२) उदकाघातः (१३) चित्राश्च योगाः (१४) माल्यग्रंथन विकल्पाः (१५) शेखरकापीडयोजनं (१६) नेपथ्य प्रयोगा (१७) कर्णपत्र भड़गा (१८) गन्धमुक्ति (१९) भूषठायोजनं (२०) एन्द्रजालाः (२१) कौचुमाराश्च (२२) हस्तलाघषे (२३) विचित्र शाकयूषभक्ष्यविकार क्रिया (२८) पानकरसरागा सव योजनं (२५) सूत्रक्रीडा (२६) सूचीवानः

e-ISSN : XXXX XXXX
Volume-1, Issue-2 : July-September, 2020

कर्माणि (२७) वीणाडमरु कवाद्यानि (२८) प्रहेलिका (२९) प्रतिमाल (३०) दुर्वाचक योगाः (३१) पुस्तक वाचनं (३२) काव्य समस्यापूरणं (३३) नाटकार व्यायिकादर्शनं (३४) पट्टिका वान वेत्र विकल्पांविवाल्पा : (३५) तक्षकर्माणि (३६) तक्षणं (३७) वास्तु विद्या (३८) रुप्यपरीक्षा (३९) धातुवादः (४०) मणिरागाकर ज्ञानं (४१) वृक्षायुर्वेद योगाः (४२) मेषकुक्कुटलावकयु विधि (४३) शुकसारिका प्रलापनं (४४) उत्सादने संवाहने केशमर्दने च कौशलं (४५) अक्षरमुष्ति काकथनम् (४६) म्लेच्छितविकल्पा (४७) देशभाषा विज्ञानं (४८) पुष्प शकटिका, (४९) निमित्तज्ञानं (५०) यन्त्रमातका (५१) सम्पाठ्यं (५२) धारणमातृका (५३) मानसी काव्य क्रिया (५४) अभिघानकोश (५५) छन्दोज्ञानं (५६) छलितयोगाः (५७) वस्त्र गोपनानि (५८) घूतविशेषः (५९) क्रियाकल्पः (६०) आकर्षक्रीडा (६१) बालक्रीडनकाति (६२) वैनयिकीनां (६३) व्यायामिकीन च (६४) विद्यानां ज्ञानं इति चतुः षष्टिरङ्गविद्या कामसूत्रावयविन्य ।।

कई स्थानों पर हमें १६ कलाओं का उल्लेख भी मिलता है । जिनमें श्री, भू, कीर्ति, इला, लीला, कान्ति, विद्या, विमला आदि का उल्लेख किया गया है । जो कला के साथ-साथ व्यक्तित्व के गुणों की ओर संकेत करती है । अतः यह ६ कलाएँ व्यक्तित्व विकास की चरम सीमाएँ कही जा सकती है ।

बालक को कला से जोड़ने वाले कारण :

प्रश्न यह उठता है, कि बालक कलाओं से जुड़ता कैसे है ? अर्थात् बालक के व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारक कौन - २ से है ? कहा जाता है, कि व्यक्ति का व्यवहार उन पांच लोगों का संयुक्त रुप होता है, जो उसके निकट सबसे अधिक समय के लिए रहते है । उसी प्रकार बालक के व्यक्तित्व निर्माण में पांच कारकों की मूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण है ।

१. गृह
२. औपचारिक शिक्षण संस्थान
३. अन्य शिक्षण संस्थान
४. समाज या आस-पास का वातावरण
५. आभासीय दुनियां (वर्चुवल वर्ड) एवं इलेक्टानिक मीडिया ।

१. गृह :- गृह से तात्पर्य यहाँ बालक के जन्म पूर्व आवास अर्थात् माता का गर्भ एवं जन्म पश्चात् परिवार से है । जिनके साथ वह अपना सर्वाधिक समय व्यतीत करता है । भारतीय गाथाओं, विवरणों आदि में हमें गर्भ काल से बालक के सीखने, सुनने, संस्कार ग्रहण करने का उल्लेख प्राप्त होता है । उदाहरणार्थः- अभिमन्यु जहॉ गर्भ में चक्रव्यूह भेदन की कला सीख लेते है, वहीं रावण ऋषि पिता की संतान होते हुए भी दैत्य मॉं के संस्कारों से प्रभावित होता है ।

e-ISSN : XXXX XXXX
Volume-1, Issue-2 : July-September, 2020

अतः यह कहा जा सकता है कि बालक में संस्कारों के बीज माता के गर्भ से ही पड़ जाते हैं । यही संस्कार बालक को गर्भ में ''कला'' का एक सुदृढ़ आधार भी प्रदान कराते हैं ।

पारिवारिक स्तर पर वह अपने बड़ों (दादा - दादी आदि) से रामायण, महाभारत की कई कहानियों को सुनता है और उन चरित्रों की छवि अपने मास्तिष्क में डालकर वो राम, कृष्णादि पात्रों जैसा बनना चाहता है । क्योंकि इन चरित्रों के प्रत्येक वृतान्तों में कहीं न कहीं कुछ कलाओं का उल्लेख भी प्रस्तुत होता है, जिससे बालक सहज ही समझ लेता है कि उसे कौन सी कला सीखनी है, जो उसे भविष्य में एक आदर्श चरित्र बनने में सहायता प्रदान करेंगी ।

माता-पिता का लगाव बालक को उसके द्वारा किये गये कार्य को कला के रुप में पोषित करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं । उदाहणार्थः- माता की स्वरपूर्ण लोरी, धार्मिक, गीत आदि से वह गायन कला में अपनी रुचि दिखा सकता है ।

घर में पूजनादि आयोजनों में मालादि को भिन्न-भिन्न प्रकार से गुथते देख वह ''माल्य ग्रंथन विकल्प कला'', घर में माता को शीघ्रता से कार्य करते देखकर ''हस्तलाघवकला'' (हाथों के काम में फुर्ती और सफाई) सीख सकता है । माता को भिन्न-भिन्न पेय-पदार्थ बनाते देख वह ''पानकरसरागसव'' योजन कला (विविध प्रकार के शर्बत, आसव आदि बनाना) में उसका ज्ञान बढ़ सकता है ।

वात्स्यायन के द्वारा बतायी गयी ये कलाएँ पारस्परिक रुप से ही संवहित होती रही है इनके लिए किसी विशेष प्रकार की संस्थाओं का निर्माण नहीं किया गया था । वर्तमान में यह माता एवं परिवार के अन्य सदस्यों पर निर्भर करता है, कि वह किस स्तर की कला की जानकारी अपने बालक को दे पाते हैं एवं बालक कितना समय उस कला के साथ व्यतीत करता है ।

औपचारिक शिक्षण संस्थान :-

भारतीय शिक्षा हंमेशा से ही कला आधारित रही है आदि काल से गुरु आश्रम में राजकुमार से लेकर सामान्य वर्ग तक के बालकों के लिए लकड़ी चुनना, भोजन निर्माण में सहयोग देना, धनुर्विद्या, शास्त्रज्ञान आदि कई क्रियाओं के निमित्त उन्हें कला-कौशल की शिक्षा के साथ-साथ कठिन समय में जीवन निर्विघ्न की शिक्षा भी प्राप्त होती थी ।

वर्तमान में पुनः भारत सरकार द्वारा चालित विभिन्न संस्थाओं ने बालक के शिक्षण में कला कौशल को एक महत्वपूर्ण स्थान दिया है, जिससे बालक बिना किसी दबाव के खेल-खेल में ही अपनी सचि के कार्य करते हुए विभिन्न शैक्षणिक गतिवधियों में संलग्न हो सके ।

उदाहरणार्थः- NCERT ने प्राथमिक स्तर पर (I to V) पाठ्यक्रम को पूर्णतः कला आधारित शिक्षा देने का आवाहन किया है । उच्च प्राथमिक स्तर पर चित्रकला, मूर्तिकला, नृत्यकला, संगीत कला तथा

e-ISSN : XXXX XXXX
Volume-1, Issue-2 : July-September, 2020

नाट्यकला आदि के अध्ययन का खाका भी खींचा है । ऐसा पाठ्यक्रम बालक को कला के साथ जोड़ने में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्विघ्न करता है ।

वहीं पाठ्य सहगामी क्रियाओं में होने वाले विभिन्न आयोजन जैसे-नृत्य-नाट्य के आयोजन से ''नेपथ्य प्रयोग कला'' विज्ञान मेलों (Science Exhibition) में ''यन्त्र मातृका कला'' (विभिन्न प्रकार के मशीन कल-पुर्जे आदि बनाना), काव्य प्रतियोगिताओं में ''मानसी काव्य क्रिया कला'' (किसी श्लोक में छोडे हुए पद को मन से पूरा करना), खेल-कूद के माध्यम से ''व्यायामविद्या कला'' आदि का ज्ञान उसे प्राप्त होता है ।

- अन्य शिक्षण संस्थान :-

आज कल बालक की रुचि यदि किसी विशेष कला में अधिक हो तो उनके लिए विभिन्न अन्य संस्थानों की सुविधा उपलब्ध है जिसमें वह चित्रकला, मूर्तिकला, नृत्य, गायन आदि कलाएँ सीख कर उनमें अपना भविष्य भी बना सकता है । इसके अतिरिक्त ग्रीष्म कालीन अवकाश में उसे भिन्न-भिन्न प्रकार की कक्षाओं में वह कई रुचिपूर्ण कलाओं को सीखता है, जिससे उसके समय का सदोपयोग एवं कार्यकुशलता में वृद्धि होती है ।

समाज एवं आस-पास का वातावरण :-

बालक अपने आस-पास के वातावरण से भी बहुत प्रभावित होता है । उदाहरणार्थ जब वह दुर्गा पूजा में प्रयोग होने वाली प्रतिमा को बनते हुए देखता है, तो उसमें प्रयोग होने वाले यंत्रो, सामग्रियों से उसका परिचय होता है जो उसे उस कला के बारे में ज्ञान एवं रुचि उत्पन्न करता है । यह प्रभाव आप प्रान्तीय स्तर पर भी देख सकते है, जैसेः- बंगाल प्रांत में जहॉ फुटबाल एवं संगीत के प्रति एक बड़े दल का रुझान है वहॉ का बालक सहज ही इन प्रवृत्तियों से जुड़ जाता है । वहीं महाराष्ट्र में बाल कलाकारों की एक अच्छी संख्या को देखा जा सकता है ।

इलेक्ट्रानिक मीडिया एवं वर्चुवल वर्ड :-

अन्य की अपेक्षा नवीन कारक परन्तु सर्वथा आज सबसे प्रभाव शाली रुप में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है । बालक का सुकोमल मस्तिष्क इसके गुणों के साथ-साथ इसके अवगुणों को भी ग्रहण कर लेता है, उदाहरण स्वरुप आज कार्टून चरित्र की भॉति बालकों का बोलना, सास-बहू वाले सीरियल के पात्रों की तरह संवाद स्थापित करना आदि एक जटिल समस्या बनते जा रहे है । वहीं मोबाइल गेमिंग, वर्चुवल गेमिंग ने बालक को मैदान, खुले पर्यावरण में जा कर सीखने की क्रिया को ध्वस्त किया है । इन सभी पर माता-पिता की दृष्टि होना तथा उन्हें गलत कार्यो में न प्रवृत्त होने देने से बालक को आगामी जीवन में आने वाली कई परेशानियों से बचाया जा सकता है ।

कला शिक्षा का बालक के व्यक्तित्व पर प्रभाव :-

पूर्व में हमने देखा कि किन-किन माध्यम से बालक कला के साथ जुड़ता है। तद्पश्चात् अब हम यह जानने का प्रयत्न करेगें की विभिन्न माध्यमों से अर्जित इस कला शिक्षा का बालक के उपर क्या प्रभाव पड़ता है ? एवं फलस्वरुप उसके व्यक्तित्व में क्या-क्या परिवर्तन होते हैं ।

१. आत्म विश्वास में उन्नति :-

किसी भी कला को प्रस्तुत करते समय बालक को समूह में अपनी अभिव्यक्ति(विचार) का मौका मिलता है, साथ ही साथ उसे अपने किये गये कार्यों के लिए सराहना भी मिलती है, जिससे उसके आत्म-विश्वास में वृद्धि होती है । जिसका प्रयोग वह अपने कमजोर क्षेत्रों को सुधारने के लिए भी करता है ।

२. सामुदायिक भावना का विकास :-

कलाओं को जब समूह में किया जाता है, जैसे नृत्य-नाट्य, समूह चित्रकारी, समूह वादन आदि, तो उससे बालक में अन्य प्रस्तुति देने वाले बालकों के साथ सामंजस्य बैठाना, भावों को समझना, एक - जुट होकर कार्य करने की प्रवृत्ति प्रबल होती है । जिससे बालक में सामुदायिक भावना का विकास होता है ।

३. कल्पना शक्ति का विकास:-

विभिन्न प्रकार के चित्र बनाते समय बालक अपनी कल्पना शक्ति का प्रयोग करते हैं एवं उसे अपने पूर्व ज्ञान से जोड़ते हैं जिससे उन्हें कौशल पूर्ण कार्य करने में सहायता मिलती है । जिसका प्रयोग अपनी शैक्षणिक क्षमता में भी कर पाते हैं । उदाहरण स्वरुप हम कई वैज्ञानिकों को देख सकतें हैं । जिन्होनें बाल्यकाल की कल्पना स्वरुप अपने प्रयोगों को साकार रुप दिया ।

बौद्धिक क्षमताओं का विकास :-

कला में अभ्यास का एक अलग महत्व है और इस एक काम को कई बार करने की प्रक्रिया में बालक का मस्तिष्क निरंतर कार्य करना सीख जाता है । जिससे उसे अन्य किसी भी कार्य को करने में, सीखने में जादा कठिनाई नहीं होती ।

शारीरिक क्षमताओं का विकास :-

योग, नृत्य आदि कलाओं के माध्यम से बालक शारीरिक गतिविधियो से जुड़ता है जो उसे शारीरिक सबलता के साथ ही रोग मुक्त रखने में भी सहायता प्रदान करती हैं ।

उर्जा की सकारात्मक अभिव्यक्ति :-

बालक उर्जा का स्त्रोत होता है कलाए उसे अपनी उर्जा को सकारात्मक दिशा में ले जाने का मार्ग प्रशस्त करती है ।

e-ISSN : XXXX XXXX
Volume-1, Issue-2 : July-September, 2020

निष्कर्ष :-

मनुष्य जीवन भर कुछ न कुछ सीखता है, परन्तु सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर बाल्य-काल की घटनाओं का प्रभाव सर्वाधिक होता है। कला के साथ उसके जुड़ाव का ये सर्वधा सबसे उपयुक्त समय होता है। अबोध बालक किसी कला को अपने जीवन में किस शिखर पर स्थापित करेगा इसी समय उसकी दिशा निर्देशित हो जाती है। माता-पिता और शिक्षक का इसमें महत्वपूर्ण स्थान है। वस्तुतः इस लिए इन्हें भगवान से पहले पूजित होने का अधिकार प्राप्त है। ये तीन कारीगर हैं जो बालक रुपी नींव को भिन्न - भिन्न कलाओं के माध्यम से मजबूती प्रदान करते हैं जो आगे चलकर विशाल स्तम्भ के रुप में राष्ट्र रुपी छत को सुदृढ़ बनाने में अपना सहयोग देते हैं।

इस पथ उद्ददेश्य नहीं
श्रात भवन में टिक रहना,
किन्तु पहुॅचना उस सीमा पर
जिसके आगे राह नहीं
अथवा उस आनन्द भूमि पर
जिसकी सीमा कही नहीं।
जयशंकर प्रसाद।